डॉ. कलबाग और विज्ञान आश्रम

विज्ञान आश्रम, पाबल, पुणे के श्रीनाथ कलबाग आज हमारे बीच नहीं हैं। लेकिन शिक्षा के क्षेत्र में किए गए अपने कामों की बदौलत वे हमेशा हमारे बीच रहेंगे।

कलबाग ने अपने जीवन के करीब 20 वर्ष ग्रामीण युवाओं को शिक्षा देने में बिताए। मगर शिक्षा का उनका नज़रिया परंपरागत तरीके से काफी फर्क था। उनका मानना था कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो एक गांव के बच्चे को अपना जीवन सुधारने में मदद करे, न कि उसे शहर की ओर पलायन को मजबूर करे। शिक्षण के उनके तरीके में न तो किसी कक्षा की ज़रुरत होती है, न ही किसी श्याम पट्ट की और न ही किसी पुस्तक की। उनका मानना था कि बच्चे अपनी रोज़ाना की ज़िंदगी में विभिन्न तरह के कामों को करते हुए जो कुछ सीखते हैं वही सबसे अच्छी शिक्षा है।

कलबाग मानते थे कि उन्होंने स्वयं भी जो कुछ सीखा है वह भी इसी प्रकार सीखा है। वे कहते थे कि उन्हें ऐसा कुछ भी याद नहीं जो उन्होंने स्कूल में सीखा हो और वह आज भी उनके काम आ रहा हो।

डॉ. कलबाग की विज्ञान और विशेष कर इंजीनियरिंग में विशेष रुचि थी। बचपन में उन्होंने घर में अपने लिए एक छोटी-सी प्रयोगशाला भी बना रखी थी जिसमें वे तरह-तरह के प्रयोग किया करते थे।

उन्होंने एम.टेक. तक की पढ़ाई भारत में करने के बाद अमेरिका के एक विश्वविद्यालय से फुड टेक्नॉलॉजी में पी.एच.डी. की। तत्पश्चात उन्होंने भारत वापस आकर हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड कम्पनी में 27 वर्षों तक काम किया। मगर इस दौरान उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में काम करने की अपनी योजना को और पुख्ता बनाया।

अपनी इस नौकरी के आखिर के दिनों में उन्होंने होमी भाभा सेंटर फॉर सांइस एज्यूकेशन, मुंबई के लिए मुंबई में फुटपाथ के बच्चों के बीच एक सर्वे किया। सर्वे के दौरान उन्होंने पाया कि वे बच्चे कई तरह की समस्याओं के हल बड़ी आसानी से ढूंढ ले रहे थे। मगर जब उन्हीं बच्चों से उनके पाठ्यक्रम की चीज़ों के बारे में बात की गई तो वे उसमें काफी पिछड़े हुए दिखे। इससे कलबाग इस

निष्कर्ष पर पहुंचे कि स्कूली पाठ्यक्रम उन बच्चों की क्षमताओं और योग्यताओं के अनुरूप नहीं है, लेकिन अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी से वे बच्चे जो कुछ भी सीख रहे थे वह किसी भी मायने में स्कूलों में दी जाने वाली शिक्षा से कम नहीं था। लेकिन उनके विचारों के आधार पर महानगर-पालिका की शालाओं का पाठ्यक्रम बदला जाता इसकी संभावना नहीं थी।

ऐसे ही कुछ और अनुभवों के आधार पर कलबाग धीरे-धीरे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि वर्तमान शिक्षा व्यवस्था बच्चों को कुछ भी नहीं सिखाती। उदाहरण के लिए उन्होंने यह सवाल उठाया कि कोई भी बच्चा अपने पैदा होने के दो वर्ष के अन्दर कम-से-कम एक भाषा तो सीख ही लेता है। लेकिन अगले दस वर्षों में वह कोई और भाषा क्यों नहीं सीख पाता?

उन्होंने इस बात की तरफ भी लोगों का ध्यान खींचा कि प्राथमिक शालाओं में नामांकन कराए बच्चों में से 90 प्रतिशत हाई स्कूल स्तर तक भी नहीं पहुंच पाते – और दलील यह दी जाती है कि ये बच्चे 'कमअक्ल' होते हैं इसलिए पढ़ नहीं पाते। उन्होंने पूछा, क्या हमने कभी यह सोचने की कोशिश की है कि यही बच्चे आगे चलकर हमारे मकान बनाते हैं, हमारी गाड़ियों की मरम्मत करते हैं, बहुत सारे छोटे मोटे उद्योग-धंधे चलाते हैं या खेती करते हैं। अगर ये बच्चे 'कमअक्ल' होते तो इतने प्रकार के काम किस प्रकार कर पाते?

शिक्षा के अपने इन्हीं सब विचारों को अमली जामा पहनाने के लिए उन्होंने सन् 1983 में इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ एज्यूकेशन, पुणे के सहयोग से पुणे के पास के एक गांव पाबल में विज्ञान आश्रम की स्थापना की। इस आश्रम में मुख्य रूप से आस-पास के गांवों के बच्चों को विभिन्न प्रकार के कौशलों का प्रशिक्षण दिया जाना शुरू किया गया। इसके अतिरिक्त इन बच्चों में समस्याओं के निवारण की प्रवृति के विकास पर भी विशेष ध्यान दिया गया। लेकिन यहां सीखने सिखाने का सारा काम किसी विशेष प्रयास के तहत नहीं बल्कि सामान्य काम-काज के दौरान ही होता है।

विज्ञान आश्रम ने अपनी स्थापना के बाद अपना सर्वप्रथम उद्देश्य शिक्षण की इस खास विधि को सामान्य शिक्षा प्रणाली में लागू होने लायक बनाना तय किया। कलबाग और उनके साथी अपने इस उद्देश्य में सफल भी रहे। उन्होंने ऐसी एक प्रणाली का विकास किया जिसका नाम रुरल डेवलेपमेंट थ्रू एज्यूकेशन सिस्टम (RDES) अर्थात शिक्षा व्यवस्था के द्वारा ग्रामीण विकास, रखा।

यह प्रणाली मुख्य रूप से विकास के विभिन्न कामों को अपनाकर एक

ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करने की बात करती है जिसके अंदर बच्चे वास्तविक परिस्थितियों में कई तरह के कौशलों को सीख पाते हैं। इसके अन्तर्गत समाज के लोगों को कीमत चुकाने पर कई तरह की सेवाएं प्रदान की जाती हैं, और इस प्रकार सेवा प्रदान करने के दौरान छात्रों का विभिन्न प्रकार के कौशलों में प्रशिक्षण हो जाता है।

इस कार्यक्रम की दो विधियां विकसित की गईं हैं। पहली विधि परंपरागत शिक्षा व्यवस्था में पाठ्य-क्रम के एक भाग के रूप में 8वीं से 10वीं कक्षा के विद्यार्थियों के लिए विकसित की गई है। इस पाठ्यक्रम को महाराष्ट्र राज्य शिक्षा बोर्ड की मान्यता प्राप्त है और अभी तक महाराष्ट्र में करीब 20 स्कूल इस पाठ्यक्रम को चलाते हैं।

दूसरी विधि गैर पारंपरिक है जिसमें 8वीं कक्षा के बाद स्कूल छोड़ चुके बच्चों को एक साल तक इसका प्रशिक्षण दिया जाता है। यह पाठ्यक्रम विज्ञान आश्रम में ही चलाया जाता है और यह पूरी तरह से आवासीय है। इसके अन्तर्गत छात्र घर, स्वास्थ, खेती, पशुपालन, प्रौद्यौगिकी, ऊर्जा तथा पर्यावरण के बारे में जीवन की वास्तविक परिस्थितियों के माहौल में जानकारी प्राप्त करते हैं। साथ ही वे इन मुद्दों के सैद्धान्तिक पहलुओं की भी जानकारी आश्रम स्थित पुस्तकालय या इंटरनेट से प्राप्त करते हैं। इस पाठ्यक्रम के दौरान छात्र विभिन्न कामों को करते हुए कुछ पैसे भी कमा लेते हैं। इस पाठ्यक्रम को पूरा करने के बाद छात्रों को नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ ओपेन स्कूलिंग, दिल्ली की तरफ से एक डिप्लोमा भी दिया जाता है।

कुल मिला कर विज्ञान आश्रम एक ऐसे स्कूल की झांकी प्रस्तुत करता है जो कि न केवल अपने उद्योग-धंधों और सेवा प्रदान करने वाले कामों की बदौलत आर्थिक रूप से स्वतंत्र है, बल्कि जहां छात्र विभिन्न चीज़ों के बारे में सीखे सैद्धान्तिक मुद्दों को वास्तविक परिस्थितियों में लागू कर उसका स्वयं अनुभव भी प्राप्त करते हैं। विज्ञान आश्रम अपने सभी छात्रों से यह अपेक्षा करता है कि आश्रम से निकलने के बाद वे अपने गांवों में छोटे-मोटे उद्योग-धंधे शुरू करें जिससे वे दूसरे लोगों को भी शहर की तरफ पलायन करने से रोक पाएं। विज्ञान आश्रम अपने इस उद्देश्य में काफी हद तक सफल सिद्ध हो रहा है।

गौतम पांडेय: एकलव्य के सामाजिक अध्ययन समूह के सदस्य हैं।